Shodh Prabha: A Multidisciplinary Journal
ISSN: 3108-2726 (Online), Volume-2, Issue-3, (May - June) 2026

गौरीपुर घराने के स्वर्गीय डॉ. वरिन्दर कुमार जी का संगीत जगत में योगदान

डॉ. शुप्रीत सिंह
सहायक प्रोफ़ेसर, गुरु नानक देव यूनिवर्सिटी, अमृतसर
Email: shupreet@gmail.com

सारांश

यह अध्ययन स्वर्गीय डॉ. वरिन्दर कुमार जी के जीवन, संगीत प्रशिक्षण, वादन शैली तथा उनके शिक्षण एवं मंचीय योगदान का विश्लेषण प्रस्तुत करता है। आप पंजाब के उन प्रमुख सितार वादकों में से एक थे, जिन्होंने न केवल अपनी उत्कृष्ट मंच प्रस्तुतियों द्वारा श्रोताओं को प्रभावित किया, बल्कि सितार को एकल वादन के रूप में स्थापित करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। आपने विभिन्न प्रतिष्ठित संस्थानों से औपचारिक संगीत शिक्षा प्राप्त की तथा अनेक गुरुओं के मार्गदर्शन में अपनी कला को परिष्कृत किया। एक कुशल शिक्षक के रूप में उन्होंने खालसा कॉलेज, अमृतसर एवं गुरु नानक देव विश्वविद्यालय जैसे संस्थानों में अध्यापन करते हुए अनेक शिष्यों को प्रशिक्षित किया, जो आज संगीत के क्षेत्र में सक्रिय हैं। उनकी वादन शैली में पारंपरिक घरानों की विशेषताओं के साथ-साथ नवीनता का संतुलित समन्वय देखने को मिलता है। आपने देश के विभिन्न मंचों पर अपनी प्रस्तुतियों के माध्यम से भारतीय शास्त्रीय संगीत के प्रचार-प्रसार में महत्वपूर्ण योगदान दिया। उन्हें अनेक सम्मानों से सम्मानित किया गया, जो उनके सांगीतिक योगदान का प्रमाण है। प्रस्तुत अध्ययन से स्पष्ट होता है कि डॉ. वरिन्दर कुमार का व्यक्तित्व एक सफल कलाकार, समर्पित शिक्षक और प्रभावशाली सांगीतिक व्यक्तित्व के रूप में स्थापित होता है, जिनका योगदान संगीत जगत में सदैव प्रेरणादायक रहेगा।

मुख्य शब्द: वरिन्दर कुमार, सितार, गौरीपुर घराना, पंजाब, संगीत शिक्षा

मूल लेखः-

पंजाब में सितार वादन को मंचीय प्रस्तुतियों के माध्यम से लोकप्रिय बनाने वाले प्रमुख कलाकारों में स्वर्गीय डॉ. वरिन्दर कुमार का नाम अत्यंत सम्मान के साथ लिया जाता है। वे एक उत्कृष्ट कलाकार होने के साथ-साथ एक समर्पित शिक्षक भी थे। उन्होंने न केवल अपने प्रभावशाली वादन द्वारा श्रोताओं को मंत्रमुग्ध किया, बल्कि सितार को एकल वादन के रूप में स्थापित करने में भी महत्वपूर्ण योगदान दिया।

डॉ. वरिन्दर जी से साक्षात्कार के दोरान उन्होंने बताया कि उनका का जन्म 30 मई 1945 को पाकिस्तान के लायलपुर (वर्तमान फैसलाबाद) में एक सांगीतिक परिवार में हुआ। उनके पिता श्री लक्ष्मण दास एक प्रतिष्ठित सितार वादक और संगीतकार थे, जिन्हें उनके उत्कृष्ट वादन के कारण "पंजाब का रविशंकर" कहा जाता था। उनकी माता श्रीमती शंकुतला देवी गृहिणी थीं, परंतु उन्हें भी संगीत से गहरा लगाव था। इस प्रकार, डॉ. वरिन्दर कुमार का पालन-पोषण एक ऐसे वातावरण में हुआ जहाँ संगीत जीवन का अभिन्न अंग था।

उनके परिवार के अन्य सदस्य भी संगीत से जुड़े हुए थे। उनकी बड़ी बहन श्रीमती उर्मिल, छोटे भाई श्री जतिन्दर कुमार तथा छोटी बहन श्रीमती कमलेश सभी संगीतज्ञ थे। श्री जतिन्दर कुमार ने अनेक अवसरों पर उनके साथ मंच साझा किया और बाद में चंडीगढ़ के एम.सी.एम. डी.ए.वी. कॉलेज में प्राध्यापक रहे, जबकि श्रीमती कमलेश ने जालन्धर के एस.डी. कॉलेज में अध्यापन कार्य किया।

1947 में भारत-पाक विभाजन के पश्चात उनका परिवार लायलपुर से जालन्धर आकर बस गया। उनके पिता श्री लक्ष्मण दास ने 1948 में जालन्धर के कन्या महाविद्यालय में संगीत प्राध्यापक के रूप में कार्य प्रारंभ किया। उस समय पंजाब का क्षेत्र वर्तमान हरियाणा और हिमाचल प्रदेश तक विस्तृत था, जिसके कारण दूर-दूर से विद्यार्थी उनके पास संगीत शिक्षा प्राप्त करने आते थे"।[1]

प्रारंभिक संगीत प्रशिक्षण एवं गुरु-शिष्य परंपरा

वरिन्दर कुमार जी का संगीत प्रशिक्षण बचपन से ही प्रारंभ हो गया था। जालंधर स्थित मिलाप चौंक के पास बने उनके पुराने घर मे एक वार्तालाप के दोरान उन्होंने बताया कि "उनके पिता ने उन्हें अपनी गोद में बैठाकर तबले पर तीन ताल का ठेका सिखाया, जो उनके संगीत जीवन की शुरुआत थी। उनके घर में नियमित रूप से संगीत सभाएँ आयोजित होती थीं, जिनमें शिष्य प्रस्तुति देते थे और बालक वरिन्दर भी उनमें भाग लेते थे।

उनके प्रथम गुरु उनके पिता ही थे, जिनसे उन्होंने सितार के साथ-साथ हारमोनियम और तबले की प्रारंभिक शिक्षा प्राप्त की। उनके पिता की इच्छा थी कि वे एक कुशल सरोद वादक बनें। इसी उद्देश्य से उन्हें हिसार के श्री दास गुप्ता से सरोद की शिक्षा दिलाई गई। उन्होंने सरोद में भी अच्छी दक्षता प्राप्त की, किंतु गुरु के स्थानांतरण के कारण यह शिक्षा आगे जारी नहीं रह सकी।

इसके बावजूद, उन्होंने सरोद पर पर्याप्त पकड़ बना ली थी और इसी के आधार पर उन्होंने हरिवल्लभ संगीत सम्मेलन में अपने छोटे भाई के साथ जुगलबंदी प्रस्तुत की। इसके अतिरिक्त उन्होंने दिलरुबा, संतूर और जलतरंग जैसे अन्य वाद्यों का भी ज्ञान प्राप्त किया।

शिक्षा एवं संघर्ष

डॉ. वरिन्दर कुमार की प्रारंभिक शिक्षा जालन्धर के दोआबा स्कूल तथा दोआबा कॉलेज में हुई। वर्ष 1965 में उनके पिता के निधन के पश्चात उनके जीवन में आर्थिक कठिनाइयाँ उत्पन्न हो गईं, जिसके कारण उन्हें अपनी पढ़ाई बीच में ही छोड़नी पड़ी। परिवार की जिम्मेदारियों को निभाने के लिए उन्होंने विभिन्न संस्थानों में संगीत अध्यापन प्रारंभ किया।

कठिन परिस्थितियों के बावजूद उन्होंने अपनी शिक्षा जारी रखी। उन्होंने 1968 में प्राचीन कला केन्द्र से "संगीत भास्कर", 1970 में अखिल भारतीय गान्धर्व महाविद्यालय से "संगीत अलंकार" तथा 1971 में प्रयाग संगीत समिति से "संगीत प्रवीण" की उपाधियाँ प्राप्त कीं।

उन्नत प्रशिक्षण एवं गुरु-शिष्य परंपरा

डॉ. वरिन्दर कुमार के पिता चाहते थे कि वे पंडित रविशंकर से शिक्षा प्राप्त करें, किंतु सन् 1967–68 में हरिवल्लभ संगीत सम्मेलन में उस्ताद विलायत खाँ के वादन को सुनकर वे उनसे अत्यंत प्रभावित हुए और उन्हीं से शिक्षा प्राप्त करने की इच्छा प्रबल हो गई। वे कई वर्षों तक उनके संपर्क में रहे और उनकी शैली को निकट से समझते रहे।

वर्ष 1974 में उन्हें औपचारिक रूप से उस्ताद विलायत खाँ से शिक्षा प्राप्त करने का अवसर मिला, जब उनकी भेंट भैणी साहब के सतगुरु जगजीत सिंह जी नामधारी से हुई। उनके मार्गदर्शन में वे देहरादून जाकर उस्ताद जी के सान्निध्य में रहे और इमदादखानी (गौरीपुर) घराने की परंपरा को आत्मसात किया।

लगभग दो वर्षों के प्रशिक्षण के पश्चात आर्थिक कारणों से उन्हें पुनः जालन्धर लौटना पड़ा, जहाँ उन्होंने ए.पी.जे.

कॉलेज में प्राध्यापक के रूप में कार्य प्रारंभ किया। अपने अध्यापन कार्य के साथ-साथ उन्होंने उच्च शिक्षा भी जारी रखी और दिल्ली विश्वविद्यालय से एम.फिल. तथा गुरु नानक देव विश्वविद्यालय, अमृतसर से पीएच.डी. की उपाधि प्राप्त की।

प्रस्तुतिकरण एवं मंचीय योगदान

डॉ. वरिन्दर कुमार का संपूर्ण जीवन संगीत, विशेष रूप से सितार वादन, के प्रति समर्पित रहा। अपने शिक्षण कार्य के साथ-साथ वे निरंतर मंचीय प्रस्तुतियों में भी सक्रिय रहे। युवावस्था से ही उन्होंने विभिन्न प्रतिष्ठित मंचों पर अपने सितार वादन का प्रदर्शन प्रारंभ कर दिया था।

अपने छोटे भाई श्री जतिन्दर कुमार के साथ उन्होंने हरिवल्लभ संगीत सम्मेलन जैसे महत्वपूर्ण मंच पर जुगलबंदी प्रस्तुत कर अपनी प्रतिभा का परिचय दिया। इसके अतिरिक्त उन्होंने नार्थ जोन कल्चरल सेंटर, चंडीगढ़ सहित जालन्धर, पटियाला, लुधियाना, होशियारपुर, सुल्तानपुर, अम्बाला, रोहतक, भैणी साहब, शिमला, धर्मशाला तथा ग्वालियर आदि अनेक स्थानों पर सफल प्रस्तुतियाँ दीं। इन सभी मंचों पर उनके वादन को अत्यंत सराहना प्राप्त हुई और उन्होंने अपनी कला से श्रोताओं को प्रभावित किया।

अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी उन्होंने अपनी पहचान स्थापित की। थाईलैंड में आयोजित प्रस्तुतियों में उनके सितार वादन ने श्रोताओं को विशेष रूप से आकर्षित किया और भारतीय शास्त्रीय संगीत की गरिमा को प्रतिष्ठित किया।

डॉ. वरिन्दर कुमार आकाशवाणी जालन्धर एवं शिमला केंद्रों के ग्रेडेड कलाकार रहे। वर्ष 1990 से 2005 तक वे 'बी-हाई ग्रेड' के मान्यता प्राप्त कलाकार के रूप में नियमित प्रस्तुतियाँ देते रहे। इसके अतिरिक्त वर्ष 1984 से वे दूरदर्शन जालन्धर तथा अन्य केंद्रों से भी अनौपचारिक रूप से अपने कार्यक्रम प्रस्तुत करते रहे।

सितार वादन के अतिरिक्त उनकी रुचि अन्य वाद्यों—जैसे संतूर, दिलरूबा, हारमोनियम, तबला, गिटार तथा जलतरंग—में भी थी। इसी कारण उन्होंने अपने शिक्षण काल के दौरान अनेक वाद्य-वृंद (ऑर्केस्ट्रा) का गठन किया और विद्यार्थियों को सामूहिक संगीत प्रस्तुति का प्रशिक्षण दिया। इस प्रकार, उनका प्रस्तुतिकरण केवल व्यक्तिगत वादन तक सीमित नहीं रहा, बल्कि उन्होंने समूह संगीत के विकास में भी महत्वपूर्ण योगदान दिया"।[2]

वादन शैली एवं तकनीकी विशेषताएँ

डॉ. वरिन्दर कुमार का वादन इमदाद खानी (गौरीपुर) घराने की परंपरा से प्रभावित था, जिसमें गायकी अंग की विशेषता स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती थी। उनके सितार वादन में राग की प्रस्तुति अत्यंत भावपूर्ण और संतुलित होती थी। विशेष रूप से आलाप के दौरान मींड, खटका, मुर्की, कृन्तन, जमजमा तथा गमक जैसे अलंकारों का सुचारु और प्रभावशाली प्रयोग उनकी शैली की प्रमुख विशेषता थी।

उनकी प्रस्तुति में जोड़ और झाला के साथ-साथ विलम्बित एवं द्रुत गतों में राग का क्रमिक विस्तार अत्यंत सुनियोजित ढंग से दिखाई देता था। गातों स्वर पक्ष की दृष्टि से उनके वादन में गहनता, रचनात्मकता और कल्पनाशीलता का अद्भुत समन्वय देखने को मिलता था। वहीं ताल पक्ष में भी उन्हें विभिन्न तालों में गतों की रचना तथा विविध लयकारियों पर पूर्ण अधिकार प्राप्त था। उन्होंने तीन ताल की प्रत्येक मात्रा से गतों की रचना की कई प्रमुख रागों मे की जिनमे से सम से उठने वाली राग मारवा की गत,तीसरी मात्र से मियां की तोड़ी की गत का उठान, आठवीं मात्रा से राग जोग की गत एवं एक ताल, रूपक ताल, झप ताल, धमार ताल मे गातों का निर्माण विशेषकर उल्लेखनीय हैं।

डॉ. वरिन्दर कुमार की एक विशिष्ट विशेषता यह थी कि वे शास्त्रीय संगीत के साथ-साथ सुगम और लोक संगीत को भी सितार पर अत्यंत प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करते थे। उनकी प्रस्तुति में ऐसा भाव उत्पन्न होता था मानो सितार स्वयं गा रहा हो। तानों की स्पष्टता, गति और तीनों सप्तकों में संतुलित पकड़ उनके वादन को और अधिक प्रभावशाली बनाती थी।

सांगीतिक परिवार से जुड़े होने तथा विभिन्न वाद्यों में दक्षता के कारण वे अपने सितार वादन में अन्य वाद्यों की तकनीकों का भी समुचित प्रयोग करते थे, जिससे उनकी प्रस्तुति में नवीनता और आकर्षण उत्पन्न होता था। हालांकि, इस नवाचार के बावजूद वे रागदारी की शुद्धता और पारंपरिकता को सदैव बनाए रखते थे।

उनकी वादन शैली में एक सूफियाना भाव तथा टप्पा अंग की झलक भी देखने को मिलती थी, जो उन्हें समकालीन सितार वादकों से विशिष्ट पहचान प्रदान करती थी।

डॉ. वरिन्दर कुमार एक उत्कृष्ट सितार वादक होने के साथ-साथ जीवन भर एक समर्पित एवं प्रतिबद्ध शिक्षक भी रहे। उन्होंने अपने शिक्षण कार्य के साथ-साथ विभिन्न संस्थानों में संगीत के प्रसार हेतु निरंतर योगदान दिया। अपने प्रारंभिक शिक्षण काल में उन्होंने 'संगीत सदन' तथा 'नवभारत संगीत विद्यालय' में संगीत अध्यापक के रूप में कार्य किया। इसके अतिरिक्त गान्धर्व महाविद्यालय की होशियारपुर शाखा में उन्होंने स्नातकोत्तर स्तर के विद्यार्थियों को वादन संगीत की शिक्षा प्रदान की।

वर्ष 1971–72 के दौरान उन्होंने जालन्धर के विभिन्न शिक्षण संस्थानों—जैसे एच.एम.वी. कॉलेज, डी.ए.वी. कॉलेज तथा बाद में ए.पी.जे. कॉलेज ऑफ फाइन आर्ट्स—में अध्यापन कार्य किया। यहाँ उन्होंने न केवल सितार, बल्कि अन्य वाद्यों का भी प्रशिक्षण दिया। ए.पी.जे. कॉलेज में उन्होंने लगभग 18 वर्षों तक अध्यापन किया, जो उनके दीर्घ और समर्पित शिक्षण जीवन का महत्वपूर्ण चरण रहा।

इसके पश्चात वर्ष 1992 में उन्होंने गुरु नानक देव विश्वविद्यालय, अमृतसर के संगीत विभाग में अध्यापन कार्य प्रारंभ किया। उन्हें इस विश्वविद्यालय के संगीत विभाग की स्थापना का श्रेय प्राप्त है तथा वे वहाँ के प्रथम संगीत प्राध्यापक रहे। साथ ही, वे विश्वविद्यालय के सैनेट एवं सिंडीकेट के सदस्य के रूप में भी सक्रिय रहे। लगभग एक दशक तक विश्वविद्यालय में सेवा देने के पश्चात वे वर्ष 2005 में सेवानिवृत्त हुए"।[3]

सेवानिवृत्ति के पश्चात भी उनका संगीत के प्रति समर्पण निरंतर बना रहा। नामधारी कला केन्द्र, भैणी साहब तथा आनंद फाउंडेशन, सुल्तानपुर लोधी जैसे संस्थानों में उन्होंने विद्यार्थियों को संगीत की शिक्षा प्रदान की। इन संस्थानों में वे जीवन पर्यन्त सक्रिय रूप से जुड़े रहे और अनेक विद्यार्थियों को प्रशिक्षित किया। इन संस्थानों में वह सितार के साथ साथ सरोद, ताऊस, दिलरुबा,सारंगी,रबाब, तार शहनाई इत्यादि सभी प्रकार के तंत्री वाद्यों की शिक्षा प्रदान करते थे।

इसके अतिरिक्त, देश के विभिन्न विश्वविद्यालयों द्वारा उन्हें समय-समय पर संगोष्ठियों, सेमिनारों तथा रिफ्रेशर कोर्स में रिसोर्स पर्सन के रूप में आमंत्रित किया जाता था। एक रचनात्मक कलाकार के रूप में उन्होंने अनेक रागों में स्वयं की बंदिशों की रचना की। साथ ही, उन्होंने दो नवीन राग—'प्रताप कौस' तथा 'मृदु कल्याण'—की परिकल्पना एवं सृजन भी किया, जो उनके नवाचारपूर्ण दृष्टिकोण का परिचायक है। राग प्रतापकाँस की प्रस्तुति आपने हिमाचल प्रदेश की शिमला यूनिवर्सिटी में दी जिसकी वहाँ के श्रोताओं ने खूब सराहना की। आप की वादन शैली मे आड़, कुआड़, बिआड़, की लयकारियों के साथ छंद का प्रयोग आपकी विशेषता का प्रतीक है।

डॉ. वरिन्दर कुमार ने संगीत निर्देशन के क्षेत्र में भी योगदान दिया। उन्होंने नामधारी कला केन्द्र, भैणी साहब पर आधारित डॉक्यूमेंट्री फिल्म *"धूड़ी इस धरती दी"* के लिए संगीत संयोजन किया। इसके अतिरिक्त गुरु नानक देव विश्वविद्यालय के विश्वविद्यालय गीत "देह शिवा वर मोहि एहै " का संगीत निर्देशन भी उनके द्वारा किया गया। इसके इलावा आपने कई वाद्यवृंद रचनाओं की रचना की जिसे आज भी यूथ फेस्टिवल कई संस्थानों द्वारा बजाया जाता है।

शिष्य परंपरा एवं शिक्षण दृष्टिकोण

डॉ. वरिन्दर जी के सपुत्र श्री सरस्वतस ने बताया की "पिता जी का व्यक्तित्व केवल एक कुशल सितार वादक तक सीमित नहीं था, बल्कि वे अत्यंत विनम्र, सरल और समर्पित स्वभाव के व्यक्ति भी थे। उनके मधुर वादन और स्नेहपूर्ण व्यवहार के कारण अनेक संगीत साधक स्वाभाविक रूप से उनकी ओर आकर्षित होते थे। वे अपने शिष्यों को निरंतर अभ्यास, अनुशासन और साधना के लिए प्रेरित करते रहते थे।

उनकी शिक्षण पद्धति विशेष रूप से प्रभावशाली थी, जिसमें वे सितार वादन के जटिल तकनीकी पक्षों को भी अत्यंत सरल, क्रमबद्ध और व्यावहारिक तरीके से समझाते थे। इसी कारण उनके शिष्य न केवल तकनीकी रूप से दक्ष बने, बल्कि संगीत की गहराई को भी आत्मसात कर सके"।[4]

"उनके प्रमुख शिष्यों में उनके छोटे भाई श्री जतिन्दर कुमार, छोटी बहन श्रीमती कमलेश सैनी, उनकी पुत्रियाँ सुश्री गौरी (सितार वादिका) एवं अक्षिप्तिका (संतूर वादिका), तथा उनके पुत्र डॉ. सरस्वतस कुमार का नाम प्रमुख है। इसके अतिरिक्त श्रीमती उषा सूद, श्री लाल वामोलिन, श्री रजिन्द्र सिंह, श्री शमिन्दर सिंह, श्री राजकुमार सिंह, अंजु कुन्द्रा, गुरदियाल सिंह, हरदियाल सिंह लाली, डॉ. रेणुका गंभीर, उदेश कुमारी तथा श्री सुखविंदर सिंह गोलडी, डॉ. शुप्रीत सिंह जैसे अनेक शिष्य आज विभिन्न प्रतिष्ठित पदों पर कार्यरत रहते हुए संगीत के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं"।[5]

सम्मान एवं उपाधियाँ

डॉ. वरिन्दर कुमार को उनके उत्कृष्ट सितार वादन तथा रागदारी पर गहन अधिकार के कारण पंजाब के अनेक प्रतिष्ठित संगीत मंचों पर प्रस्तुति देने का अवसर प्राप्त हुआ। उनके वादन को विभिन्न संगीत सम्मेलनों में अत्यंत सराहा गया। उन्होंने सतगुरु प्रताप सिंह संगीत समारोह, रबाबी भाई मरदाना शास्त्रीय संगीत सम्मेलन (पटियाला) तथा श्री बाबा हरिवल्लभ संगीत सम्मेलन जैसे प्रमुख आयोजनों में अपने सितार वादन से श्रोताओं को प्रभावित किया।

उनकी सांगीतिक उपलब्धियों के लिए उन्हें अनेक सम्मान एवं उपाधियाँ प्रदान की गईं। इनमें जालन्धर में आयोजित 22वीं मुहम्मद रफी नाइट में "उस्ताद" की उपाधि विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इसके अतिरिक्त 22 नवम्बर 2015 को उन्हें सतगुरु जगजीत सिंह स्मृति पुरस्कार से सम्मानित किया गया। 30 मार्च 2016 को रबाबी संगीत सम्मेलन, पटियाला में उन्हें प्रिंसीपल शमशेर सिंह करीर स्मृति पुरस्कार प्रदान किया गया, जो उनके योगदान की उच्च स्तर पर स्वीकृति का प्रतीक है।

निधन एवं विरासत

15 जून 2016 की मध्य रात्रि को अचानक हृदयाघात के कारण डॉ. वरिन्दर कुमार जी का निधन हो गया, जिससे संगीत जगत को अपूरणीय क्षति पहुँची। उनके आकस्मिक निधन ने समस्त संगीत समुदाय को गहरे शोक में डाल दिया। निधन से एक दिन पूर्व सुल्तानपुर लोधी मे उन्होंने मेरे साथ अपनी कई रचनाएं साँझा कीं। मैं नहीं जानता था

कि वो शाम उनके साथ मेरी बिताई हुई आखरी शाम होगी।

अपने जीवन के अंतिम समय तक वे संगीत साधना और शिक्षण कार्य में निरंतर संलग्न रहे। एक सच्चे साधक के रूप में उनका सम्पूर्ण जीवन संगीत को समर्पित रहा। उनके द्वारा दिए गए सांगीतिक योगदान तथा उनके द्वारा तैयार की गई समृद्ध शिष्य परंपरा के कारण वे सदैव स्मरणीय रहेंगे। पंजाब ही नहीं, बल्कि व्यापक संगीत जगत में उनका स्थान एक प्रेरणादायक एवं आदरणीय व्यक्तित्व के रूप में स्थापित है।

निष्कर्ष

डॉ. वरिन्दर कुमार का जीवन भारतीय शास्त्रीय संगीत, विशेष रूप से सितार वादन, के प्रति समर्पण का उत्कृष्ट उदाहरण है। उन्होंने एक कलाकार, शिक्षक और मार्गदर्शक के रूप में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उनके द्वारा विकसित वादन शैली, शिक्षण पद्धति और सांगीतिक दृष्टिकोण आज भी संगीत जगत को प्रेरित करते हैं।

उनका योगदान केवल मंचीय प्रस्तुतियों तक सीमित नहीं रहा, बल्कि उन्होंने संगीत शिक्षा के माध्यम से नई पीढ़ी को भी समृद्ध किया। इस प्रकार, वे पंजाब के संगीत इतिहास में एक महत्वपूर्ण और प्रेरणादायक व्यक्तित्व के रूप में स्थापित होते हैं।

संदर्भ

1. डॉ. वरिन्दर कुमार कुमार जी से साक्षात्कार द्वारा प्राप्त
2. वही
3. वही
4. डॉ. सरस्वतस(पुत्र) से साक्षात्कार द्वारा प्राप्त
5. श्री सुखविंदर सिंह गोलडी से साक्षात्कार द्वारा प्राप्त